आपने लिख

रेलयात्रा के दौरान यह पत्रिका किसी अनजाने यात्री की थी और मुझे पढ़ने का मौका मिला। इसकी रचनाएं और प्रकाशन उत्कृष्ठ हैं, उसके लिए पूरी टीम को बधाई।

'किसने गाया मीरा को' परिता मुक्ता द्वारा एक विस्तृत व अनूठी-अनछुई प्रस्तुति है। इसे पढ़ते समय मैं अपने बचपन से जुड़े इस मंदिर की यादों में खो गया।

सन् 1952 में चित्तौड़गढ़ – उस समय इसे किला ही कहा जाता था। शहर नीचे और दुर्ग तक जाने का सात किलोमीटर का निर्जन रास्ता, उस पर बने सात सिंहद्वार। किले का आखिरी विशालकाय दरवाज़ा – रामपोल – जिसे रात में बंद कर दिया जाता था। गिने-चुने मकान थे वहां। 1952 में पहली कन्या शाला खुली थी और मेरी मां वहां पहली अध्यापिका बनी थीं और मेरे पिता चित्तौड़ में शिक्षा विभाग में थे।

यह लेख बिल्कुल प्रामाणिकता से लिखा गया है क्योंकि हमारी पूरी तीसरी और चौथी कक्षा उस वर्ष जीर्ण -शीर्ण मंदिर को श्रमदान के तहत साफ करने जाती थी और शनिवार को सांस्कृतिक कार्यक्रम भी उस मूर्तिविहीन मंदिर में ही होता था। श्री लालसिंह शक्तावत के प्रयासों से ही इस मंदिर को मीरा मंदिर कहा जाने लगा।

लेख में शक्तावत जी का नाम 'लाल सिन्हा शक्तावत' लिखा गया है। सिन्हा उपनाम बिहार में होता है। सही नाम लालसिंह शक्तावत है और ये सिसोदिया क्षत्रिय हैं, इसलिए इस मंदिर के विषय में तत्कालीन महाराणा भूपालसिंह जी से इन्होंने ही चर्चा भी की थी।

ये भी सही है कि मूर्ति का आश्वासन महाराणा साहब ने दिया था लेकिन कारण जो भी रहे हों – प्लाईवुड पर मीरा की साढ़े पांच फुट लंबी आकृति, उस पर उदयपुर के चित्रकार से रंग भरवाकर भिजवाई थी।

उस समय 'मीरा महोत्सव' पूरे किले में मनाया गया था। उस समिति के अध्यक्ष लालसिंह शक्तावत थे व सचिव मांगीलाल शर्मा थे, जो मेरे पिता थे; इसलिए उस समय इस मंदिर के प्रतिष्ठा समारोह में हमने काफी कार्य किया था। आपने संदर्भ पत्रिका में इस अनछुए इतिहास को प्रकाशित किया इसके लिए पुनः एक बार बधाइयां। संदर्भ प्रकाशन की ऊंचाइयों को छुए।

डॉ. राजेन्द्र भट्ट
पालनपुर, गुजरात

लंबे इंतज़ार के बाद अंक 46 व 47 पढ़ा। अंक 46 में पर्वतों की यात्रा का रोमांच मन में भर गया। उत्तरांचल के कई लोगों ने ऐसी यात्राएं की हैं। पंडित नैन सिंह भी तो यहीं के थे, जिनका घुम्मकड़ी में कोई सानी नहीं मिलेगा।

नैनीताल से प्रकाशित होने वाली 'पहाड़' पत्रिका ने भी ऐसी यात्राओं पर दो विशेषांक निकाले हैं।

'गुलेलबाज़ लड़का' कहानी के माध्यम से भीष्म साहनी बहुत याद आए।

हमारी पाठ्य पुस्तकें हमारे आसपास की कितनी कम बातें करती हैं इसका आभास तब मिला जब 'कहां गए वो आम' लेख पढ़ा। ग्रामीण परिवेश में तो शिक्षा में भाषा का बहुत असर पड़ता है। हमारे गांवों में बच्चे स्थानीय बोली से ही परिचित होते हैं और अपने स्कूल में पाठ्यक्रम में उन्हें कहीं भी अपनी बोली – कुमांउनी – में बातें होती नहीं दिखती। अध्यापक ज़बरदस्ती उनसे हिन्दी बुलवाते हैं। जबकि खुद भी आपस की बातचीत कुमांउनी में करते हैं। कई बार ऐसा महसूस होता है कि परिवेश से शिक्षा का बहुत कटाव है, अब पहाड़ पर गधा नहीं होता, इमली नहीं लगती, कछुआ नहीं पाया जाता, तो कठिनाई आती है कि ये आखिर कैसे होते होंगे? इनके लिए चित्रात्मक जानकारी वाली किताबें उपलब्ध नहीं हैं। फिर इन सब चीज़ों की मांग हेतु जनाधार भी नहीं है, क्योंकि विकल्प स्वरूप पालक बच्चों को पब्लिक स्कूलों में भेज देते हैं, जहां शिक्षा तो महंगी है लेकिन कई तरह के अनुशासन भी होते हैं। लेकिन इनके पास भी इन सब से निपटने के लिए कोई ठोस तरीका नहीं है। शिक्षा को बोझिल होने से बचाने के लिए रोचक पाठ्यक्रम, किताबों का अभाव भी है।

अंक 47 भी मिल गया है। उम्मीद है आगे भी नियमितता को बनाए रखेंगे।

कमलेश उप्रेती, नारायण नगर
पिथौरागढ़, उत्तरांचल

भूल सुधार

पिछले अंक में लेख 'किसने गाया मीरा को' में मीरा महोत्सव के अध्यक्ष का नाम लाल सिन्हा शक्तावत प्रकाशित हो गया था। हमारे एक पाठक राजेन्द्र भट्ट ने इस भूल को सुधारा है। सही नाम लालसिंह शक्तावत है।

इसी तरह पिछले अंक में प्रकाशित कहानी 'विलियम बिल्ला' के चित्रकार श्री उदय खरे थे। भूलवश इनका नाम उदय प्रकाश लिखा गया था। इस गलती के लिए हमें खेद है।

– संपादक मंडल

संदर्भ के पाठकों को फिल्टर वाला चश्मा

8 जून 2004 को सुबह 10:46 से शाम 4:50 के बीच फिल्टर की मदद से आप भी कोशिश करके देखिए – सूरज की चकती पर अगर एक काला बिन्दु दिख रहा हो तो वह शुक्र ग्रह ही है। यदि उस दिन आप फिल्टर का इस्तेमाल करके उसे नहीं देख पाएं तो इस फिल्टर को टेलिस्कोप या दूरबीन पर लगाकर सूर्य-शुक्र ग्रहण देख सकते हैं।

संदर्भ के पाठकों को हम इस अंक के साथ फिल्टर वाला एक चश्मा दे रहे हैं। ताकि वे इस ग्रहण के साथ-साथ ऐसी ही अन्य घटनाओं का लुत्फ भी उठा सकें।

ग्रहण देखने के लिए फिल्टर

इस ग्रहण को सुरक्षित रूप से देखने के लिए ऐसे फिल्टर नवनिर्मिती व कॉमेट मीडिया फांऊडेशन द्वारा उपलब्ध करवाए जा रहे हैं जो सूर्य की रोशनी की तीव्रता को एक लाख गुना कम कर देते हैं।

प्रत्येक फिल्टर की कीमत 5/– रुपए है। शालाओं या अन्य समूहों द्वारा 100 से ज़्यादा फिल्टर एक साथ खरीदने पर ये 3.50 रुपए प्रति फिल्टर की दर पर उपलब्ध कराए जा रहे हैं।

नवनिर्मिती व कॉमेट मीडिया फांऊडेशन क्रमशः कम खर्चीले नवाचारी वैज्ञानिक खिलौने विकसित करने वाले व विभिन्न संचार माध्यम के ज़रिए नवाचारी शिक्षा में काम करने वाले अव्यावसायिक समूह हैं।

संपर्क करें

'डिस्कवर इट'
फ्लेट नं 2, लेक साइट बिल्डिंग
स्टेट बैंक के सामने, पवाई हॉस्पीटल के पास
पवाई, मुंबई – 400 076
फोनः (022) 2579 2628, 2577 3215